शाहरूख खान की पीड़ा कितनी यथार्थ, कितनी भ्रम

पिछले दिनों फिल्म अभिनेता शाहरूख खान ने अपने मुसलमान होने के आधार पर सामाजिक भेदभाव होने के कारण अपने मन की पीड़ा व्यक्त की। ऐसी ही पीड़ा इसके पहले शबाना आजमी या अन्य कई प्रमुख लोग भी व्यक्त कर चुके हैं। व्यक्त पीड़ा का एक आधार यह रहा है कि इनके साथ समाज में समानता का व्यवहार नहीं होता। इन्हें हिन्दू कालोनियों में मकान नहीं मिलते। इन्हें कभी कभी कट्टरवादी हिन्दू यहॉ तक कह देते हैं कि पाकिस्तानी हो। पाकिस्तान चले जाओ। इनके नाम के आगे खान शब्द जुड़ा होने से अमेरिका तक में इन्हें संदेह की नजरों से देखा जाता है। कभी कभी तो इनकी विशेष तलाशी ली जाती हैं। इनकी पीड़ा है कि अपनी ओर से अधिक से अधिक धर्म निरपेक्ष, शान्ति प्रिय तथा राष्ट्र भक्त होने के बाद भी इन्हें इस तरह दुहरे आचरण क्यों झेलने पड़ते हैं।

सामान्यतया लोग ऐसे आरोपों को नकार देते हैं। विशेष कर वे लोग नकारने में ज्यादा आगे रहते हैं जो सामाजिक व्यवहार में ऐसा भेदभाव करने में सबसे आगे रहते हैं। कम से कम मैं उन लोगों में शामिल नहीं। फिर भी मैं एसा महसूस करता हूॅ कि इनकी पीड़ा वास्तविक है और इसकी समीक्षा होनी चाहिये।

स्पष्ट है कि व्यक्तिगत व्यवहार में न शाहरूख खान के साथ कोई भेदभाव होता है न शबाना आजमी के साथ और न ही ऐसे किसी अन्य धर्म निरपेक्ष शान्तिप्रिय मुसलमान के साथ। कलाकार के रूप म इन सबको औरों से कम प्रशंसा प्राप्त नहीं। किन्तु जब सामाजिक व्यवहार की बात आती है तब इनकी धार्मिक पृष्ठभूमि ऐसा भेदभाव पैदा करती है। स्वतंत्रता के पूर्व न भारत में मुसलमानों के साथ ऐसा भेदभाव था न दुनिया में। भेदभाव न होते हुए भी बहुसंख्य मुसलमानों ने भारत के आम लोगों के साथ रहना अस्वीकार करके पाकिस्तान बनाया। वह जख्म अब तक भरा नहीं है। इसके लिये ये मुसलमान दोषी नहीं जो भारत में हैं किन्तु आंशिक रूप से तो इनकी सामूहिक सोच संदेहास्पद होती है। मुसलमान और हिन्दू के बीच एक खास फर्क होता है कि मुसलमान राष्ट्र और समाज से उपर धर्म को मानता है जबकि हिन्दू धर्म और राष्ट्र से उपर समाज को मानता है। अस्सी प्रतिशत हिन्दू किसी धार्मिक संगठन का सदस्य नहीं होता। धार्मिक संस्थाओं से जुड़ा रहता है। यहॉ तक कि लाख सर पटकने के बाद भी न संघ शिवसेना बहुमत हिन्दुओं का विश्वास अर्जित कर पाये न विश्वहिन्दुपरिषद या बजरंग दल वाले। दूसरी ओर अस्सी प्रतिशत मुसलमान संगठन से अधिक जुड़े रहे और संस्थाओं से कम। क्या यह उचित नहीं होता कि भारत में रहने का विकल्प चुनने के बाद ये मुसलमान धर्म की अपेक्षा समाज को ज्यादा महत्व देते। इन्होंने स्वतंत्रता के पूर्व की संगठित रहने की आदत को छोड़ा क्यों नहीं?

मैं स्वयं भी सामाजिक व्यवहार में मुसलमानों से दूर रहता हूॅ। मैं समझता हूॅ कि वैचारिक स्तर पर यह व्यवहार उचित नहीं। विशेषकर उनके साथ जिन्हें मैं व्यक्तिगत रूप से बहुत अच्छा मुसलमान मानता हूॅ। फिर भी मन में एक भय मूलक भावना काम करती रहती है कि मुसलमान व्यक्तिगत रूप से बहुत अच्छा होता है किन्तु अपने धार्मिक संगठन के रूप में अत्यन्त अविश्वसनीय हो जाता है। मैं सोचता हूॅ कि म अपने घर के बगल में मुसलमान को बसाकर एक नई सतर्कता की चिन्ता क्यों पैदा करूॅ। हमारे बच्चे यदि उनकी बहन बेटियों के साथ गलत व्यवहार करेंगे तो उन्हें थोड़े से संघ परिवार को छोड़कर शेष अस्सी प्रतिशत हिन्दुओं का कोप भाजन बनना होगा जबकि उनके बच्चे हमारी बहन बेटियों पर बुरी नजर डालेंगे तो उनके समाज के अस्सो प्रतिशत लोग या तो प्रोत्साहन देंगे या चुप हो जायेंगे। विचार करने की बात है कि मैं ऐसे खतरे को नजदीक क्यों करूॅ। क्या यह उचित नहीं होता कि भारत में रहने का विकल्प चुनने वाला मुसलमान भारत में उसी तरह धर्म परिवर्तन को रोक लेता जिस तरह हिन्दुओं ने एक पक्षीय प्रतिबंध लगा रखा है। यदि भारत का हिन्दू एक पत्नी कानून को स्वीकार करता है तो आपको अपनी ओर से ऐसा प्रस्ताव पारित करने में क्या कठिनाई है। चार से कम विवाह करना कहीं भी इस्लाम विरूद्ध नहीं है। किन्तु आपने किसी बुरी नीयत से इसे धार्मिक मान्यता के साथ जोड़कर रखा है। स्पष्ट है कि भारत का भी बहुसंख्यक मुसलमान स्वयं को शेर और दूसरों को गाय मानता हैं दूसरी ओर भारत का बहु संख्यक हिन्दू स्वयं को गाय और संगठित मुसलमानों को शेर मानते हैं। यदि गाय शेर से दूरो बढ़ाने की सतर्कता रखे तो इसमें शेर को शिकायत क्यों?

कुछ साम्प्रदायिक हिन्दुओं ने आपको मुसलमान होने के कारण पाकिस्तान जाने की ताड़ना दी। ऐसे साम्प्रदायिक तत्वों को आम हिन्दू का कितना विश्वास प्राप्त है यह आप भी जानते हैं। यदि वास्तव में बहुसंख्यक हिन्दू ऐसा सोच लेता तो जिस तरह पाकिस्तान में हिन्दुओं की संख्या लगातार घटाई जा रही है उसी तरह भारत में भी होना कोई कठिन नहीं। इसके विपरीत भारत में तो मुसलमानों की संख्या लगातार बढ़ रही है। जिन लोगों ने आपको धमकी दी है उनमें एक भी हिन्दू का गुण नहीं। वे तो गुणात्मक रूप से मुसलमानों के हो ज्यादा निकट हैं। ऐसे अघोषित मुसलमानों की धमकी आम हिन्दुओं का विषय नहीं। फिर आपको ऐसी धमकियों को बहाना बनाने से बचना चाहिये। जो पाकिस्तानी छिप छिपाकर भारत में आकर रह रहे हैं उनको तो भारत में निकालना कठिन हो रहा है तो भारतीय मुसलमान एसा क्यों सोचते हैं। उनमें भी आप जैसा धर्म निरपेक्ष व्यक्ति ऐसी बातों को तूल दे तो दुख आपको नहीं, हमें होना चाहिये। वास्तव में दुख की बात तो यह है कि पाकिस्तानी मुसलमान अनेक खतरे उठाकर भी भारत में आना चाहता है। दूसरी ओर कश्मीरी मुसलमान यदा कदा भारत की अपेक्षा पाकिस्तान के गुणगान करने लगता है। साथ में यह भी कि वह भारत छोड़कर पाकिस्तान जाना भी नहीं चाहता अन्यथा भारत ने उन्हें जबरदस्ती रोक नहीं रखा है। प्रश्न उठता ह कि ऐसा तीन तरह का आचरण क्यों? अफजल गुरू को न कश्मीरी होने के कारण फांसी हुई न मुसलमान होने के कारण। उसे संसद भवन पर आक्रमण की योजना का सूत्रधार मानकर फांसी हुई। उसके प्रति कश्मीर में हमदर्दी क्यों? उसके प्रति भारत के कुछ मुसलमानों में बेचेनी क्यों? यदि भारत में धार्मिक आतंकवादियों में पंचान्नवे प्रतिशत मुसलमान और पांच प्रतिशत हिन्दू होंगे तो जेल जाने, जेलों में अमानवीय प्रताड़ना, निर्दोषों पर अत्याचार और फांसी जैसी घटनाओं में यह प्रतिशत बदलेगा कैसे? मुस्लिम कट्टरवाद के पक्ष में कई बार आवाज उठाने वाले साहित्यकार अपूर्वानन्द जी ने जनसत्ता में लेख लिखकर अफजल गुरू के पक्ष में काफी कुछ लिखा है। ऐसे लोग मुसलमानों का नुकसान ही ज्यादा कर रहे हैं। विश्वास तर्कों से नहीं मिलता। विश्वास व्यवहार से मिलता है। शाहरूख खान और शबाना आजमी को हिन्दू समाज में व्यवहार के आधार पर विश्वास प्राप्त है। किन्तु जब उनका खान जोर मारता है तब अविश्वास स्वाभाविक है। अपूर्वानन्द जी ने लिखा है कि अफजल गुरू दया का पात्र था। उन पर दया न करके अन्याय हुआ है। अफजल प्रत्यक्ष आक्रमण या हत्याओं में शामिल भी नहीं था फिर भी फांसी। अपूर्वानन्द जी भूल गये कि दया प्राप्त करने वाले का अधिकार नहीं। वह तो दाता की एकपक्षीय कर्तव्य होती है। दया के लिये मांग नहीं होती क्योंकि दया के लिये सिर्फ निवेदन ही संभव है। दया करने वाले को धन्यवाद दिया जाता है किन्तु न देने वाले की भी आलोचना नहीं होती। अपूर्वानन्द जी सरीखे साहित्यकार यह भी भूल गये।

प्रश्न उठता है कि शाहरूख सरीखे व्यक्ति को खान शब्द के कारण अमेरिका तक में कई बार परेशान होना पड़ा। इससे शाहरूख को कष्ट हुआ। मेरे विचार में शाहरूख का दुखी होना गलत था। सुरक्षा के लिये निर्धारित प्रक्रिया के पालन में शाहरूख को खुश होना चाहिये न कि नाराज। अमेरिका सरकार का उद्देश्य जान बूझकर शाहरूख को अपमानित करना नहीं था। यह सही है कि शाहरूख पर मुसलमान होने और

विशेषकर खान होने के कारण संदेह किया गया। यह स्वाभाविक है। कल्पना करिये कि एक डकैती होती है जिसमें एक व्यक्ति सफेद लम्बी दाढो मूंछ वाला है। स्वाभाविक है कि अनेक सफद दाढ़ी मूंछ वाले बेगुनाह संदेह के घेरे में आ सकते हैं। उसके बाद पता चला कि डकैत छः फीट करीब का था। तब ऐसे संदेहास्पद लोगों में छः फुट के आसपास वालों को छोड़कर संदेह का घेरा हट जायेगा। मुसलमान होना और खान होना ऐसे संदेह के आधार हैं तो आपको बारबार परेशानी होगी ही। आपका खान शब्द आपको परेशान करता है तो क्या हम अपनी सतर्कता छोड़ दें। आपकी शिकायत बिल्कुल ही गलत है। कल्पना करिये कि एक अग्रवाल युवक ने एक मांसाहारी होटल खोला और उसका नाम रखा अग्रवाल या मारवाड़ी भोजनालय। उसके होटल में एक भी मांसाहारी ग्राहक इसलिये नहीं गया कि अग्रवाल या मारवाड़ी भोजनालय शाकाहार की पहचान बन गया है। दूसरी ओर शाकाहारी इसलिये नहीं गये क्योंकि वहॉ जाते ही उन्हें मांस अंडा दिखा। उस अग्रवाल की शिकायत उचित नहीं। उसक समक्ष तीन मार्ग हैं (1) वह होटल का नाम बदल दे। (2) वह उस होटल को शाकाहारी कर ले। (3) वह आम अग्रवाल होटलों को मांसाहारी कर ले। यदि मुसलमान या खान शब्द इतना संदेहास्पद है तो शाहरूख अपना नाम दिलीप कुमार या जोसेफ भाई कर लें तो उन्हें क्या दिक्कत हागी। धर्म के साथ नाम की पहचान परंपरा है न कि धर्म के साथ आवश्यक। दूसरा तरीका यह भी संभव है कि शाहरूख खूब मिहनत करके मुस्लिम आतंकवाद का धब्बा ही हटवा दें अन्यथा यदि दोनों काम मंजूर या संभव नहीं तो अपनी व्यक्तिगत पहचान ठीक रखें और धार्मिक पहचान के कारण होने वाले संदेह पर बुरा मत माने। अभी पांच सात हिन्दू आतंकवादियों ने हिन्दू धर्म की पहचान कलंकित की। उनका साथ भारत के आम हिन्दुओं ने तो नहीं दिया। कुछ साम्प्रदायिक हिन्दुओं ने साथ देने की पहल भी की तो वे अब शर्मिन्दा हैं। कई बीजेपी वालों को तो बयान देना पड़ रहा है कि वे प्रज्ञा ठाकुर से जेल में मिलने नहीं गये थे। यदि ये लोग अपराधी सिद्ध होकर फांसी पर भी लटक गये तो हिन्दू समाज बुरा नहीं मानेगा। जिस तरह उमर अब्दुला ने कहा वैसा कोई हिन्दू नहीं कहेगा। बेचारे हेमन्त करकरे ने तो यह पोल खोलकर हिन्दू धर्म को ही बचा लिया अन्यथा यदि ऐसे तत्वों की पोल नहीं खुलती तो संभव है कि भविष्य में बजरंग मुनि का नाम भी शाहरूख खान सरीखे ही जांच घेरे में आ जाता। आतंकवाद का ठप्पा लगते ही उन कारणों को दूर करिये जिनके कारण ठप्पा लगा है न कि ठप्पा लगाने वाले से उलझिये। गृहमंत्री सुशील शिन्द के कथन से हिन्दुओं का सर झुका किन्तु कथन गलत नहीं था। संघ भाजपा को छोड़कर किसी को बुरा नहीं लगा। जिस तरह संघ भाजपा को बुरा लगना गलत है उसी तरह आपको भी बुरा लगना संदेह को जन्म देता है। मेरा नाम बजरंगलाल अग्रवाल था। मैं एक गंभीर विचारक रहा तथा धनहीन भी रहा। कभी किसी से चन्दा नहीं मांगा न दिया। आम तौर पर लोग अग्रवाल शब्द के कारण मुझे धनी समझते रहे और यह भी मानते रहे कि गंभीर विचारक होने के लिये ब्राहमण या वकील होना आवश्यक है। अग्रवाल धनसम्पन्न तो हो सकता है किन्तु गभीर समाजशास्त्री या संविधान विद नहीं हो सकता। मैंने अपना नाम बदलकर बजरंग मुनि कर लिया। अब मेरी समस्या दूर हो गई। शाहरूख भाई भी नाराज या दुखी न होकर समाधान सोचें। यदि आप मुसलमान होते हुए धर्म निरपेक्ष होंगे तो हिन्दू समाज का आपको अधिक विश्वास मिलेगा और मुसलमान समाज की नाराजगी झेलनी होगी। फिर भी विश्वास की एक सीमा रहेगी। आपका नाम, आपका खान पान, आपकी पूजा पद्धति फिर भी कुछ न कुछ दूरी तो रखेगी ही। इतने अन्तर को आप व्यक्ति गत पहचान से कम कर सकते हैं तथा शेष बरदास्त करना ही समाधान है।

आपने पाकिस्तान में अपनी बात कही। आपको पाकिस्तान में वहॉ के इश निन्दा कानून की जमकर आलोचना करनी चाहिये थी। पाकिस्तान का इश निन्दा कानून सम्पूर्ण इस्लाम के लिये एक कलंक है। ऐसे कलंकित कानून का सम्पूर्ण हिन्दू समाज विरोध करता है। मुसलमानों की नकल करके ही कुछ साम्प्रदायिक हिन्दुओं ने हिन्दू राष्ट्र की मांग उठाई जिसे हिन्दुओं का कभी समर्थन नहीं मिला। किन्तु जब जब हिन्दुओं ने समान नागरिक संहिता की बात उठाई तो साम्प्रदायिक मुसलमानों ने तो विरोध किया ही किन्तु आप लोगों ने भी खुलकर समर्थन की पहल नहीं की। आपको दिल से दुविधा निकालनी होगी। तभी आप मुसलमान होते हुए भी साम्प्रदायिकता के संदेह से बच सकेंगे।

मेरी आपको सलाह है कि आप तत्काल ही धर्म से उपर समाज की मुहिम चलाइये। आप पाकिस्तान के ईश निन्दा कानून की खुली आलोचना करिये। माई नेम इज खान पर तब तक जोर मत दीजिये जब तक मुस्लिम आतंकवाद से दूरी न बन जाये। यदि ऐसा हुआ तो आप मुसलमान होते हुए भी संदेह से दूर हो सकते हैं अन्यथा आपकी नाराजगी और शिकायत दूरी बढ़ाने में ही सहायक होगी।

कार्यालयीन प्रश्नो के उत्तर

प्रश्न–1 आपने अंक दो सौ बासठ मे लिखा कि अव्यवस्था लोकतंत्र का परिणाम होता है। आप स्पष्ट करे कि अव्यवस्था का कारण क्या होता है। यदि अव्यवस्था का परिणाम तानाशाही है तो अव्यवस्था का समाधान तानाशाही के अतिरिक्त कुछ है या नही?

उत्तर– लोकतंत्र दो प्रकार का होता है 1. मौलिक 2. नकल या आयातित। दोनो की पहचान बिल्कुल अलग अलग होती है। मौलिक लोकतंत्र पहले समाज की जीवन पद्धति म आता है और बाद मे शासन पद्धति मे जबकि आयातित लोकतंत्र पहले शासन मे आता है और बाद मे समाज मे। मौलिक लोकतंत्र मे समाज मालिक होता है और राज्य प्रबंधक । आयातित मे तंत्र शासक होता है और समाज अनुगामी। मौलिक लोकतंत्र समाज व्यवस्था परिवार व्यवस्था को अपनी व्यवस्था करने की छूट देता है किन्तु आयातित लोकतंत्र समाज सुधार के सारे निर्णय स्वयं करता है। आयातित लोकतंत्र मे सत्ता को नियुक्त करने का अधिकार समाज को होने से सत्ता अपने मतदाताओ को खुश रखने का प्रयत्न करती है। इससे समाज की स्वयं की निष्कर्ष निकालने की क्षमता कम हो जाती है तथा समाज हर मामले मे राज्य पर निर्भर होता है। राज्य वोट लेने के लिये जन हित के कार्य करने के स्थान पर जनप्रिय कार्यो को ज्यादा महत्व देने लगता है। मौलिक लोकतंत्र मे संस्थाएं मजबूत होती है और संगठन कमजोर। आयातित मे संस्थाएं कमजोर होती है और संगठन मजबूत। यहां तक कि धीरे धीरे संगठन गिरोह मे बदल जाते है। ऐसे गिरोह जब आपस मे टकराते है तब राज्य ऐसे गिरोहो के दबाव मे आता है । संगठनो का गिरोहो मे बदलना और राज्य का गिरोहो के दबाव मे आना ही अव्यवस्था का विस्तार करता है। संगठन का बनना और उनका आपस मे टकराव ही अव्यवस्था का मुख्य कारण है। समाज को सस्था और संगठन का फर्क जानने ही नही दिया जाता। ऐसी अव्यवस्था के दो ही समाधान होते है। 1 तानाशाही 2 लोक स्वराज्य । पश्चिम के देशो मे लोकतंत्र के नाम पर जो व्यवस्था चल रही हैं उसमे मौलिक लोकतंत्र है। वहां का लोकतंत्र लोकस्वराज्य की दिशा मे झुका रहता है। दक्षिण एशिया के देश लम्बी गुलामी से मुक्त होकर लोकतंत्र अपनाते है। यहां की जनता स्वतंत्र निर्णय लेने मे कमजोर होती ह। शासन ऐसे कमजोर समाज को मजबूत बनाने के प्रयत्न की जगह पर भूखे भेडिये के समान उनके अधिकारो को समेटना शुरू कर देता है, जो अव्यवस्था का मुख्य कारण है। भारत ऐसी अव्यवस्था से परेशान है। भारत अव्यवस्था से मुक्ति के लिये दो विपरीत दिशाओ मे देख रहा है। 1 अन्ना अरविन्द सरीखा कोई आंदोलन उसे लोक स्वराज्य की दिशा मे ले जावे 2 नरेन्द्र मोदी, चिदम्बरम सरीखा कोई तानाशाह आकर उसका समाधान कर दे। भविष्य मे क्या होगा यह तो अभी स्पष्ट नही किन्तु हमारा तो प्रयत्न है कि हम अव्यवस्था को खतम करने का पहला विकल्प चुने। तानाशाही अव्यवस्था का कोई अच्छा विकल्प नहीं है। अच्छा विकल्प तो लोक स्वराज्य ही है। तानाशाही तो हमारी मजबूरी है । कोई विकल्प नहीं।

प्रश्न–2 आपने लिखा कि महिलाओं की कुल आबादी मे करीब दो प्रतिशत महिलाएं ही आधुनिक है अन्यथा शेष अठान्नवे प्रतिशत तो पारंपरिक महिलाएं ही है। आपने लिखा कि इन आधुनिक महिलाओं के पास तर्क का भी अभाव होत है तथा चरित्र के मामले मे भी ये अठान्नवे प्रतिशत के पीछे ही होती है। आप ऐसा किस आधार पर कह सकते है।

उत्तर– आधुनिक महिलाएं कई मामलों मे पारंपरिक महिलाआ से भिन्न होती है। य व्यक्ति तो होती है किन्तु स्वयं को पारिवारिक अनुशासन से भी अलग मानती है और सामाजिक अनुशासन से भी । ये महिलाएं महिला अधिकार के लिये संगठन बनाती है। ये सब आमतौर पर वामपंथी संगठनो से जुडी होती है।

इनके चरित्र के विषय मे कुछ कहना न तो उचित है न ही प्रमाणित करना संभव है। मैने अपने अनुभवो का निष्कर्ष लिखा है । सत्य है या असत्य यह चर्चा का विषय नहीं। फिर भी अनेक आधुनिक महिलाओ के विषय मे अफवाहे उडी जिनमे नारायणदत्त तिवारी कल्याण सिंह सरीखे अनेक राजनेताओ के नाम जुडे । ऐसी आधुनिक महिलाओ की सूची लम्बी से लम्बी होते जाने के कारण मैने अंदाज से यह बात लिख दी।

किन्तु इनके पास कोई तर्क नही होता यह सत्य है। मैने टी वी पर ऐसी ही एक आधुनिक महिला कविता श्रीवास्तव को सुना। जोर दे देकर केवल एक बात बोल रही थी कि हर महिला को अपने शरीर पर पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिये। बिल्कुल ही तर्कहीन कथन था। भारत के प्रत्येक व्यक्ति को भी समान स्वतंत्रता होनी चाहिये तथा प्रत्येक नागरिक को भी। इन अधिकारो को ही मूल अधिकार कहते है। किन्तु किसी भी व्यक्ति या नागरिक को न सामाजिक मामलो मे समान अधिकार होते है न ही संवैधानिक मामलो मे । एक व्यक्ति बीमार है गरीब है उसे विशेष सहायता की जरूरत है। स्वाभाविक है कि कुछ लोगो की सुविधाओ मे कटौती करनी होगी । कुछ लोगो की सुविधाओ मे कटौती करके कुछ दूसरो के दिया जायगा जिसके लिये प्राप्तकर्ताओ का कर्तब्य है कि वे उन दाताओ का धन्यवाद करे। आप गाली देकर या चिल्ला चिल्ला कर विशेष सुविधाए नही ले सकते। कविता जी तथा वैसी ही कुछ अन्य आधुनिक महिलाओं के कथन से लगा कि उनका महिला होना शेष समाज के लिये कुछ विशेष महत्व रखता है। ऐसी तर्कहीन बाते भी रख रही थी जैसे कोई वकील अपने मुवक्किल को खुश करने के लिये बहुत जोर जोर से महत्वहीन बाते कोर्ट मे बोलता हों। महिलाओ को अपने शरीर के विषय मे निर्णय करने की पूर्ण स्वतंत्रता हो यह बेसिर पैर की बात है। क्योकि परिवार एक संगठन है जिसका एक अनुशासन है। यदि आपको पारिवारिक अनुशासन स्वीकार नही है तो परिवार से अलग होकर अकेले रहिये । कोइ व्यक्ति किसी राजनैतिक दल का सदस्य हो या मंत्री मंडल का ही सदस्य हो किन्तु अनुशासन मे नही रहूंगा। यह असंभव मांग है। अब तक समाज इन आधुनिक महिलाओं के हो हल्ले पर यह मानकर चुप रहा कि ये दो चार महिलाएं बेकार की बकबक करती रहती है। इनका कोई महत्व नही। किन्तु अब जब इनके दबाव मे सरकार कानून भी बनाने लग गई तो इन परिवार व्यवस्था समाज व्यवस्था तोडक महिलाओ के विरूद्ध परिवार व्यवस्था समाज व्यवस्था समर्थक व्यक्तियो को सतर्क ता होना ही चाहिये क्योकि समाज की चुप्पी को ये आधुनिक महिलाएं कमजोरी समझने लगी है। एक कहावत है कि सतवन्ती शर्माय चले वैश्या ठनकावे बीच बाजार। स्वाभाविक है टीवी वाले अथवा अन्य प्रचार माध्यम इनके कथन को जोर शोर से उठावे भी। यह भी संभव है इन महिलाआ के संगठित होने के कारण राजनेता या न्यायालय भी इनके एक पक्षीय हल्लें से प्रभावित हो जावे। किन्तु समाज इस तरह परिवार व्यवस्था तोडक प्रयत्नो को चुपचाप नही देखेंगा। इन आधुनिक महिलाओ ने झपट्टा मारकर कैलाश विजय वर्गीय सरीखी आवाजों को बन्द कर दिया और विजय वर्गीय जी सरीखे लोग भी वोट की लालच मे दब गये किन्तु ऐसा लम्बे समय तक नही चलेगा।

जातीय आरक्षण का दुरूपयोग

प्रश्न–3 आपने लिखा है कि सवर्णो ने आरक्षण का दुरूपयोग किया । मेरी जानकारी के अनुसार सवर्णो ने योजना पूर्वक ऐसा आरक्षण लागू नही किया, बल्कि स्वाभाविक रूप से वैसा हो गया । बाद मे सवणो ने मनुस्मृति मे चातुवर्णम मया श्रृष्ट जैसे वाक्य अपने आरक्षाण की पुष्टि के लिये जोड दिये।

उत्तर– आरक्षण स्वाभाविक रूप से हुआ या किया गया यह मै नही जानता किन्तु इतना अवश्य जानता हूँ कि हजारो वर्षो तक इस सामाजिक आरक्षण व्यवस्था का दुरूपयोग हुआ। अयोग्य लोग भी योग्य अवर्णो को दौड से बाहर करने मे सफल रहे। किसी भी प्रकार का आरक्षण एक दुधारी तलवार होता है। आरक्षण का आंशिक लाभ तब तक ही है जब तक आरक्षण दाता उसकी आवश्यकता महसूस करे तथा आरक्षण का लाभ उठाने वाला दाता के प्रति कृतज्ञ हो । जिस दिन आरक्षण दाता आरक्षण को बोझ समझने लगे तथा आरक्षण का लाभ उठाने वाला आरक्षण को अपना अधिकार मानने लगे उसी दिन आरक्षाण पूरी तरह समाप्त कर देना चाहिये। मैने चन्द्रभान प्रसाद जी के भी टी वी मे व्यग्य वाण सुन। मै न तो उन्हें पूर्व में जानता था न ही नाम से ही कुछ पता चलता था किन्तु उनकी बातें सुन सुनकर स्पष्ट हुआ कि वे आरक्षण का लाभ उठा चुके व्यक्ति हैं अन्यथा कोई अन्य तो आरक्षाण के पक्ष में इतनी कसरत नहीं करता। चंद्रभान जी ऐसे अकेले व्यक्ति नहीं हैं। इनकी संख्या हजारों में है जो आरक्षण का लाभ उठा उठा कर वैसे ही जोर जोर से भूंकते हैं जिस तरह स्वतंत्रता के पूर्व के अयोग्य सवर्ण आरक्षण की ताकत पर अपनी दादागिरी चलाते रहते थे। मैंने सुझाव दिया कि आरक्षण का लाभ उठा चुके लोग एक निश्चित सीमा से अधिक धन का कुछ भाग उन नब्बे प्रतिशत हरिजन आदिवासियों पर खर्च करें जिन्हें आज तक आरक्षण का लाभ नहीं हुआ है। रामबिलास पासवान, चन्द्रभान प्रसाद, मीराकुमार सरीखे लोगों की कोई प्रतिक्रिया नहीं आई। इसके विपरीत ये सब लोग पदोन्नति में भी आरक्षण के नाम पर अपने बेटे बेटियों के भाग्य सुधरने की नापाक कोशिश में साठ वर्षों से आरक्षण के लाभ से वंचित नब्बे प्रतिशत हरिजन आदिवासियों के समर्थन की तिकड़म करते रहे। इनकी बातें सुन सुन कर तो ऐसा लगता है कि पुराने जमाने में आरक्षाण की चोट सिर्फ इन्हीं लोगों के परिवारों को ज्यादा झेलनी पड़ी थी और इस कारण इनका अधिकार है कि ये अन्य नब्बे प्रतिशत आदिवासी हरिजनों को पीछे ढकेल कर आरक्षण का अधिकतम लाभ उठावें। स्पष्ट दिखता है कि गिरे हए की छाती पर चढ़कर उंचा दिखने वाला व्यक्ति नीचे वाले का कष्ट नहीं समझता। न हजारों वर्षों तक सवर्णों न समझा न ही आरक्षण का लाभ उठा रहे वर्तमान अवर्णों ने। मैंने स्पष्ट किया है कि आरक्षण का लाभ उठाकर मजबूत हो चुके आदिवासियों ने षड़यंत्र पूर्वक यह कानून बनवा लिया है कि गरीब आदिवासियों की जमीन कौड़ियों के मोल खरीदने का उनका अधिकार है क्योंकि वे गरीब आदिवासी भले ही भूख के कारण ही जमीन क्यों न बेच रहे हों किन्तु वे आदिवासी होने से उनके भाई हैं। और अपने भाई की जमीन कौड़ियों के भाव लेने का उनका अधिकार है अर्थात् जिसकी छाती पर चढ़कर वे उंचे दिख रहे हैं वह है तो उनका ही भाई। आजकल ऐसी ही आवाज मजबूत हरिजन भी उठाने लगे हैं कि हरिजनों की भूमि बाजार मूल्य पर भी कोई सवर्ण नहीं खरीदे भले ही ये उनके तथाकथित भाई मुफ्त में ही क्यों न ले लें।

संघ समीक्षा

प्रश्न–4 संघ हिन्दुओं की समस्या है या समाधान? यदि संघ नहीं होता तो क्या हिन्दुओं के मनोबल और संख्या में और गिरावट नहीं आती? संघ की तुलना इस्लाम सिख और साम्यवादियों से करना कितना उचित है?

उत्तर — संघ न तो हिन्दुओं की समस्या है न ही समाधान। दवा और टानिक में फर्क होता है। यदि दवा के स्थान पर टानिक दिया जाये तो आवश्यक नहीं कि गंभीर बीमारी ठीक ही हो जाये। किन्तु यदि स्वस्थ व्यक्ति टानिक की जगह दवा लेना शुरू कर दे अथवा बीमारी ठीक होने के बाद भी लम्बे समय तक दवा लेता रहे तो दवा के साइड इफेक्ट भी हो सकते हैं। संघ ने इस्लाम से टकरा कर हिन्दुओं का मनोबल बढ़ाया। आज भी भारत का हिन्दू संघ को समाधान समझकर सम्मान की नजर से देखता है। किन्तु अब जब हिन्दुत्व स्वयं शक्ति सम्पन्न और स्वस्थ है तब हिन्दू समाज को अनावश्यक लम्बे समय तक दवा पिलाने के कारण संघ समाधान की जगह समस्या बनता जा रहा है। अब हिन्दू समाज को जहरीली दवा की जगह स्वास्थ्यवर्धक शक्तिदायक टानिक की जरूरत है। जब रोगी को यह पता चलता है कि डाक्टर अपने स्वार्थ के कारण उसे अनावश्यक दवा पिला रहा है तब रोगी के मन में डाक्टर के प्रति घृणा का भाव भरने लगता है। स्वतंत्रता के पूर्व संघ की गतिविधियों पर हिन्दू समाज को संदेह नहीं था क्योंकि स्वतंत्रता के पूर्व तक संघ समाज निर्माण तक सीमित था। किन्तु स्वतंत्रता के बाद एकाएक संघ ने समाज निर्माण की लाइन छोड़कर राष्ट्र निर्माण शुरू कर दिया जिसके अन्दर सीधा सीधा सत्ता संघर्ष छिपा था तो हिन्दू समाज को संघ के प्रति अविश्वास होने लगा। जब यह पोल खुली कि नरसिंह राव जी के कार्यकाल में संघ ने अयोध्या मंदिर मस्जिद समस्या को सुलझने से जानबूझकर रोका तब संघ की नीयत पर संदेह हुआ और जब धीरे धीरे यह भेद खुला कि संघ भारतीय जनता पार्टी के नाम पर अपनी राजनीति कर रहा है तब तो उससे नफरत के भाव पदा होने लगे। आज हिन्दुत्व गुण विस्तार को आधार बनाकर दुनिया में अधिक तेजी से विस्तार कर सकता है क्योंकि हिन्दुओं की बौद्धिक क्षमता अन्य धर्मावलम्बियों से कई गुना ज्यादा है। किन्तु संघ उसके गुण प्रधान चिन्तन विस्तार में सबसे बड़ा बाधक है। इस तरह वर्तमान स्थिति में वह एक समस्या है। जहां तक इस्लाम की बात है तो भारत के अतिरिक्त हर जगह का मुसलमान आपस मे ही मरकट रहा है। भारत मे मुसलमानो की वास्तविक सुरक्षा तो संघ ही करता है। यदि कुछ दिन संघ चुप हो जावे तो भारत मे भी मुसलमान आपस मे कट मरेंगे लेकिन संघ वैसा होने दे तब ।

मै यह मानता हूँ कि संघ ने हिन्दुत्व को सुरक्षा दी है। संघ नही होता तो भारत मे मुसलमानो तथा इसाइयो की संख्या कुछ और ज्यादा हो जाती । यद्यपि भारत मे स्वतंत्रता के बाद हिन्दुओ की संख्या कम घटी किन्तु स्वतंत्रता के बाद जिस गति से हिंसा की प्रवृत्ति बढी, झूठ बोलने की आदत हुई, परिवार व्यवस्था कमजोर हुई भ्रष्टाचार बढा, इन सबको देखते हुए स्पष्ट है कि भले ही संख्या बल मे संघ का सकारात्मक प्रभाव पडा हो किन्तु चरित्र और गुणात्मक हिन्दुत्व मे खतरनाक गति से पतन हुआ है। यदि संघ अपने रास्ते को छोडकर गुणात्मक हिन्दुत्व के कार्य मे लगा होता तो गुणात्मक हिन्दुत्व की सुरक्षा भी होती और संख्यात्मक हिन्दुत्व की भी। मै नही समझता कि हिन्दू गुणात्मक वैचारिक टकराव के सहारे इस्लाम इसाइयत से मजबूत न हो। फिर हम उनके मैदान मे जाकर उनके तरीके से क्यो टक्कर दे ।हम अपने मदान मे अपने तरीके से ही क्यो न मुकाबला करे। अस्सी वर्ष के बाद संघ ने हिन्दुओ की जितनी सुरक्षा की है उसकी अपेक्षा कई गुना ज्यादा गुणात्मक हिन्दुत्व को नकसान हुआ है। यदि संघ की लाइन पर और भी बढे तो गुणात्मक हिन्दुत्व का भविष्य खराब ही दिखता है। मै कट्टर हिन्दू हूँ । मै उन धर्म निरपेक्षो मे शामिल नही जो धर्मनिरपेक्षता का अर्थ मुस्लिम इसाई तुष्टीकरण मानते है किन्तु मै वैसा हिन्दू भी नही जो गुणात्मक पतन की कीमत पर संख्यात्मक हिन्दुत्व की सुरक्षा मे लगे हुए है।

फिर भी यदि हम संघ, सिख, इस्लाम और साम्यवाद के बीच तुलना करें तो सबसे ज्यादा खतरनाक विचार धारा साम्यवाद की है। साम्यवाद न परिवार व्यवस्था को मानता है न समाज व्यवस्था को और न ही धर्म को। साम्यवाद की हर गतिविधि परिवार व्यवस्था समाज व्यवस्था को कमजोर करने वाली होती है। आज भारत में जो भी आर्थिक समस्याएँ हैं या बढ़ रही हैं वे सबकी सब साम्यवादी दुष्प्रचार की देन हैं। आज दुनिया में जो भी असत्य सत्य के समान विश्वसनीय दिख रहा है वह सब साम्यवादी प्रचार का परिणाम है। स्पष्ट है कि साम्यवादी दुनिया के सबसे ज्यादा चालाक कूटनीतिज्ञ माने जाते हैं और संघ परिवार सबसे कम। मुसलमान इस मामले में साम्यवाद के बाद है। सिख की कोई विशेष चर्चा आवश्यक नहीं। संघ तो केवल साम्यवाद और इस्लाम की क्रिया के विरूद्ध प्रतिक्रिया मात्र करता है। वे लोग जब जैसा चाहते हैं वैसा संघ से करवाते है और संघ वैसा ही करने में अपनी बहादुरी समझता है। इस तरह यदि हिन्दू, जैन, बौद्ध, इसाई से संघ की तुलना करें तो संघ इस्लाम और साम्यवाद के निकट है और यदि संघ की तुलना साम्यवाद तथा इस्लाम से करें तो संघ इन दोनों की अपेक्षा हिन्दुत्व के ज्यादा निकट है।

साम्यवादियो का आर्थिक षणयंत्र

प्रश्न–5 आप बार बार लिखत रहते हैं कि कृत्रिम उर्जा श्रम की प्रतिस्पर्धी है। यह बात सच दिखती भी है। किन्तु भारत का हर साम्यवादी समाजवादी यह बात बिल्कुल नहीं समझता। क्या कारण है?

उत्तर — कृत्रिम उर्जा बुद्धिजीवियों पूंजीपतियों की सहायक तथा श्रम शोषक होती है। हर बुद्धिजीवी पूंजीपति हमेशा चाहता है कि कृत्रिम उर्जा का मूल्य न बढ़े क्योंकि यदि कृत्रिम उर्जा का मूल्य बढ़ा तो इन दोनों वर्गों का खर्च बढ़ेगा, आय घटेगी। दूसरी ओर कृत्रिम उर्जा के मंहगा होने से मशीनी उत्पादन भी मंहगा होगा तथा आवागमन भी मंहगा होगा। इसका सीधा प्रभाव श्रम की मांग पर हागा तथा मांग बढ़ने से श्रम का मूल्य भी बढ़ेगा। इसका दुष्प्रभाव बुद्धिजीवी पूंजीपति समूह पर पड़ना निश्चित है।

भारत के साम्यवादी समाजवादी अच्छी तरह जानते हैं कि दुनिया की और खासकर भारत की राजनीति पर बुद्धिजीवियों का वर्चस्व है। गरीब, ग्रामीण, श्रमजीवी, छोटे किसान प्रचार से ज्यादा प्रभावित होते हैं जबकि पूंजीपति, शहरी, बुद्धिजीवी, बड़े किसान प्रचार में सहायक होते हैं। साम्यवादी समाजवादी दूरगाामी योजना बनाते हैं। वे अच्छी तरह समझते हैं कि कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि पूंजीपति शहरी बृद्धिजीवी बड़े किसान के खिलाफ प्रभाव डालेगी और इन सबका विरोध साम्यवाद समाजवाद के लिये राजनैतिक रूप से घाटे का आधार बनेगा इसलिये उन्होंने प्रचार माध्यमों के द्वारा इस असत्य को सत्य के रूप में स्थापित कर दिया कि कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि आम लोगों के लिये अहितकर है। गरीब ग्रामीण श्रमजीवी छोटा किसान न तो इतना समझता है न ही उसकी क्षमता है। दूसरी ओर एक भी मध्यवर्गी उच्च वर्गीय व्यक्ति इस असत्य को कभी सामने नहीं लाता। मैं अकेला और बिल्कुल अकेला बोलता लिखता हूँ तो मेरी आवाज भी सिर्फ उन्हीं लोगों तक पहुंच पाती है जिन्हें श्रम मूल्य, आवागमन मंहगा होने से नुकसान होता है। यही कारण है कि लगातार बोलते रहने के बाद भी यह आवाज अब तक दबी हुई है।

साम्यवादी तो इसलिये भी कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि का विरोध करते हैं कि भारत में इनकी मूल्य वृद्धि इनकी खपत घटा देगी जिसका सीधा सीधा आर्थिक नुकसान खाड़ी के देशों को होगा। अनेक कारणों से साम्यवादी खाड़ी देशों के सबसे बड़े शुभ चिन्तक हैं। यही कारण है कि साम्यवादी भारत में किसी भी बिजली उत्पादक योजना का भी पूरा विरोध करते हैं चाहे वह योजना परमाणु उर्जा की हो या जल विद्युत को।

समाजवादी साम्यवादियों की सम्पूर्ण राजनीति वर्ग विद्वेष पर टिकी है जिसका मुख्य आधार आर्थिक है। यदि आर्थिक विषमता घट जावे तो इन दोनों का राजनैतिक आधार ही समाप्त हो जायेगा। इसलिये दोनों ही आर्थिक समस्याओं के समाधान में रोड़े अटकाते रहते हैं। फिर भी साम्यवादियों समाजवादियों के बीच एक मौलिक अन्तर है। साम्यवादी गांधी विचारों से बिल्कुल विपरीत होते हैं जबकि समाजवादी गांधी विचारों के निकट। साम्यवादी हिंसा के समर्थक होते हैं और समाजवादी विरोधी। साम्यवादी तानाशाही के पक्षधर हैं तो समाजवादी लोकतंत्र के। साम्यवादी केन्द्रित सत्ता चाहते हैं तो समाजवादी विकेन्द्रित। साम्यवादी बहुत चालाक होते हैं तो समाजवादी सीधे साधे। गांधी हत्या के बाद साम्यवादियों ने योजना पूर्वक गांधीवादियों को पूरी तरह प्रभावित कर लिया तो समाजवादी गांधीवादियों से बहस ही करते रह गये। आप देखेंगे कि अमेरिका के परमाणु उर्जा संबंधी विरोध के लिये गांधीवादी ही आगे आये तो नक्सलवाद के समर्थन में भी अहिंसक गांधीवादी ही आगे आगे दिख रहे हैं। आतंकवादी मुस्लिम विद्रोहियों के पक्ष में भी गांधीवादी आगे दिखेंगे किन्तु यदि समाजवादी लोक स्वराज्य या ग्राम सभा की आवाज उठावे तो गांधीवादी ऐसी आवाज की पीठ में छुरा घोंपने को भी तैयार मिलेंगे।

भारत के भावी प्रधानमंत्री पर मंथन

प्रश्न–6 वर्तमान राजनैतिक वातावरण में भारत के प्रधानमंत्री के रूप में किसे प्राथमिकता देना ठीक रहेगा?

उत्तर – वर्तमान राजनैतिक वातावरण में कुछ भी कहना स्पष्ट नहीं है। स्वतंत्रता के बाद पहली बार मनमोहन सिंह के रूप में एक योग्य प्रधानमंत्री मिला। इनके कार्यकाल में सभी लोकतांत्रिक संवैधानिक शक्तियां मजबूत हुईं। सोनिया जी ने भी मनमोहन सिंह का पूरा पूरा सहयोग किया किन्तु यूपीए टू के कार्यकाल में पुत्रमोह भारी पड़ा ऐसा लगता है। फिर भी अभी स्पष्ट नहीं है कि राहुल या सोनिया क्या चाहते हैं। फिर भी मनमोहन सिंह की संभावना कम ही है क्योंकि कोई भी भ्रष्ट या तानाशाह किसी अन्य को भले ही स्वीकार कर ले किन्तु मनमोहन सिंह का स्वीकार नहीं करेगा। हमार पास दूसरे योग्य, लोकतांत्रिक और टेस्टेड उम्मीदवार नीतिश कुमार हैं। उनकी संभावनाएँ परिस्थितियों पर निर्भर करती हैं। चुनाव पूर्व उनके विषय में सोचना या कहना ठीक नहीं। वे भी सब प्रकार से योग्य होते हुए भी मनमोहन सिंह जी से कमजोर माने जाते हैं। तीसरे बहुचर्चित उम्मीदवार नरेन्द्र मोदी हैं। योग्य भी हैं, इमानदार भी और टेस्टेड भी। इनके कार्यकाल में देश आसमान तक उँचाई की प्रगति कर सकता है और समाज रसातल तक नीचे जा सकता है। भ्रष्टाचार बिल्कुल समाप्त हो जायेगा। साम्प्रदायिकता भी नहीं रहेगी। न कहीं इस्लामिक कट्टरवाद दिखेगा न कहीं संघ का हिन्दुत्व और न कहीं नक्सलवाद। भारत आर्थिक मामलों में अमेरिका तक से प्रतिस्पर्धा करेगा। भारत म अव्यवस्था तो कहीं दिखेगी ही नहीं। रोज रोज की हड़तालें और चक्का जाम से पिण्ड छूट जायेगा। किन्तु नमाज के साथ साथ रोजे का भी खतरा है। मोदी जी के कार्यकाल में वास्तविक तानाशाही का खतरा है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं रहेगी। संविधान मोदी जी के हाथ को कठपुतली बन जायेगा। न्यायपालिका या मीडिया भी मोदी जी के पक्ष में मजबूर हो जायेंगे। दो हजार उन्नीस के चुनाव में मोदी जी को तोन चोथाई तक सीटें मिल सकती हैं। अंग्रेजों के समय से भी ज्यादा कड़ी गुलामी संभव है यद्यपि यह गुलामी विदेशी न होकर स्वदेशी ही होगी किन्तु होगी तो गुलामी ही। धार्मिक भावनाएँ भी दब जायेंगी और सामाजिक भी। सिर्फ राष्ट्रवादी भावनाएँ उभार पर रहेंगी।

राहुल गांधी तो न योग्यता के आधार पर टेस्टेड हैं न विश्वसनीयता के आधार पर। राहुल गांधी का चुना जाना तो एक प्रकार का जुआ है या ताश का ब्लाईड है जिसका परिणाम कुछ भी हो सकता है। अब तक के आकलन से राहुल गांधी एक अधिक शरीफ व्यक्ति दिखते हैं जिनकी शराफत का दिग्विजय सिंह सलमान खुर्शीद सरीखे लोग दुरूपयोग भी कर सकते हैं। अब तक मैं समझ नहीं पा रहा कि राहुल गांधी खुद जल्दबाजी में हैं या सोनिया जी अपने स्वास्थ्य की कल्पना करके गति बढ़ा रही हैं। यह भी संभव है कि ये दोनों ही न चाहते हों और इनके इर्द गिर्द मडरा रही चौकड़ी को यह विश्वास हो चला हो कि राहुल सरीखा शरीफ बालक ही उनके लिये सबसे अच्छा प्रधानमंत्री बन सकता है। मेरे विचार में राहुल गांधी को प्रधानमंत्री के लिये आगे करना एक प्रकार का जुआ ही है जिसके अन्तिम परिणाम कभी अच्छे नहीं हो सकते।

नरेन्द्र मोदी का बनना किसी भी रूप में जुआ नहीं है क्योंकि उसके परिणाम निश्चित हैं। यदि अन्य कोई लोकतांत्रिक समाधान न दिखता हो तो लम्बे समय तक की अव्यवस्था की अपेक्षा तो तानाशाही ही अच्छी दिखती है, किन्तु हमें यह भी याद रखना होगा कि तानाशाही अन्तिम विकल्प होती ह क्योंकि उसके बाद उससे मुक्ति का मार्ग हिंसक क्रान्ति के अतिरिक्त कोई अन्य नहीं बचता।

सावरकर वादी हिन्दुत्व के सामने अस्तित्व का संकट

लेखक–शेष नारायण सिंह (विष्फोट डाट कॉम से)

2014 के लोकसभा चुनाव के लिए मुद्दों की तलाश में भटक रही सावरकरवादी हिन्दुत्ववादी संगठनों में रास्ते की तलाश की कोशिशें जारी हैं। इसी सिलसिले में 12 फरवरी के दिन दिल्ली में एक बार आरएसएस के बड़े नेता और बीजेपी अध्यक्ष समेत कई लोग इकट्ठा हुए आर करीब चार घंटे तक चर्चा की। आरएसएस और बीजपी से सहानुभूति रखने वाले टीवी चैनलों ने मीटिंग की खबर को दिन भर इस तर्ज में पेश किया कि जैसे उस मीटिंग के बाद देश का इतिहास बदल जायेगा, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। मीटिंग में शामिल लोगों ने बताया कि बीजेपी के नेता आर एस एस बीजेपी के सावरकरवादी हिन्दुत्व के एजेंडे को 2014 के चुनावी उदघोष के रूप में पेश करने से बच रहे हैं। इस बैठक में शामिल बीजेपी नेताओं ने कहा कि जब कांग्रेस शुद्ध रूप से राजनीतिक मुद्दों पर चुनाव के मैदान में जा रही है और बीजेपी को ऐलानियॉ एक साम्प्रदायिक पार्टी की छवि में लपेट रही है तो सावरकरवादी हिन्दुत्व को राजनीतिक आधार बनाकर चुनाव में जाने की गलती नहीं की जानी चाहिए।

बीजेपी और आर एस एस के बीच 2014 के लोकसभा चुनावों के मुद्दों के बारे में भारी विवाद है। आरएसएस की कोशिश है कि इस बार का चुनाव शुद्ध रूप से धार्मिक ध्रुवीकरण को मुद्दा बनाकर लड़ा जाए। शायद इसीलिये सबसे ज्यादा लोकसभा सीटों वाले राज्य उत्तर प्रदेश में किसी सीट से नरेन्द्र मोदी को उम्मीदवार बनाने की बात शुरू कर दी गयी है। उत्तर प्रदेश में मौजूदा सरकार में मुसलमानों के समर्थन के माहौल के चलते मुस्लिम बिरादरी में उत्साह है। उम्मीद की जा रही है कि राज्य सरकार के उपर बीजेपी वाले बहुत आसानी से मुस्लिम तुष्टीकरण का आरोप चस्पा कर देंगे और मुसलमानों के खिलाफ नरेन्द्र मोदी की इमेज का फायदा उठाकर हिन्दुओं को एकजुट कर लेंगे। राज्य मे कुछ इलाको मे समाजविराधी तत्वो ने कानून व्यवस्था के सामने खासी चुनौतियां पेश कर रखी है। इन समाज विरोधी तत्वो मे अगर कोई मुसलमान हुआ तो आर एस एस के सहयोग वाले मुकामी अखबार उनको भारी मुद्दा बना देते है, और मुसलमानो को राष्ट्रके दुश्मन की तरह पेश करके यह सन्देश देने की कोशिश करते है कि अगर मोदी की तरह की राजनीति उत्तर प्रेदश मे भो चल गयी तो मुसलमान बहुत कमजोर हो जायेगे और उनका वही हाल होगा जो 2002 मे गुजरात के मुसलमानों का हुआ था। इस तर्कपद्धति मे केवल एक दोष यह है कि आर एस

एस और उसके सहयोगी मीडिया की पूरी कोशिश के बावजूद मुसलमानो न साफ बता दिया है कि अब चुनाव वास्तविक मुद्दो पर ही लडा जायगा, धार्मिक ध्रुवीकरण की कोशिश करने से कोई लाभ नही होने वाला है।

12 फरवरी की बैठक मे आर एस एस वालो ने बीजेपी नेताओ को साफ हिदायत दी कि उनको हिन्दुओ क पक्षधर के रूप मे चुनाव मैदान मे जाने की जरूरत है जबकि बीजेपी का कहना है कि अब सरस्वती शिशु मंदिर से पढकर आये कुछ पत्रकारो के अलावा कोईभी सावरकरवादी हिन्दुत्व को गंभीरता से नही लेता । बीजेपी वालो का आग्रह है कि ऐसे मुद्दे आने चाहिये जिसमे उनकी पार्टी देश के नौजवानो की समस्याओ को संबोधित कर सके । इस बैठक से जब बीजेपी के अध्यक्ष राजनाथ सिंह बाहर आये तो उन्होने बताया कि अपनी पार्टी की भावी रणनीति के बारे मे विस्तार से चर्चा हुई । उन्होने साफ कहा कि प्रधानमंत्री पद की दावेदारी के मामले पर काई चर्चा नही हुई। हालांकि राजनाथ सिंह ने तो इस मुद्दे पर कुछ नही कहा लेकिन अन्य सूत्रो से पता चला है कि आतंकवादी घटनाओ मे शामिल आर एस एस वालो के भविष्य के बारे मे चर्चा विस्तार से हुई । आर एस एस को डर है कि अगर एन आई ए ने प्रज्ञा ठाकुर असीमानंद आदि को आतंकवाद के आरोपो मे सजा करवा दी तो मुसलमानो को आतंकवादी साबित करने की उनकी सारी मंशा रसातल मे चली जायेगी। जब तक आर एस एस से संबंधित लोगो को कई आतंकवादी घटनाओ के सिलसिले मे पकडा नही गया था तब तक बीजेपी वाले कहते पाये जाते थे कि हर मुसलमान आतंकवादी नही होता लेकिन हर आतंकवादी मुसलमान होता है।

जब आर एस एस के बडे नेता इन्द्रेश कुमार सहित बहुत सारे अन्य लोगो के खिलाफ भी आतंकवाद मे शामिल होने की जांच शुरू हो गयी तो बीजेपी वालो के सामने मुश्किले आ गयी। कांग्रेस मे साम्प्रदायिकता विरोधी राजनीति के मुख्य रणनीतिकार दिग्विजय सिंह ने भी बीजेपी की मुश्किले बढा दी जब उन्होने संघी आतंकवाद को बाकी हर तरह के आतंकवाद की तरह का ही साबित कर दिया। हालांकि जयपुर मे संघी आतंकवाद को भगवा आतंकवाद कहकर गृहमंत्री सुशिल कुमार शिन्दे ने बीजेपी वालो को कुछ उम्मीद दिखा दी थी। और बीजेपी वाले कहते फिर रहे थे कि सुशील कुमार शिन्दे ने हिन्दू आतंकवाद कहा था। यह सच नही है। मै उस वक्त हाल मे मौजुद था और शिन्दे के भाषण को सुना था। उन्होने हिन्दू आतंकवाद शब्द का प्रयोग नही किया था। लकिन बीजेपी उन्हे हिन्दू विरोधी साबित करने पर आमादा थी और ऐलान कर दिया था कि वह संसद के बजट सत्र के दौरान शिन्दे का बहिष्कार करेगी। लेकिन इस बीच शिन्दे ने बीजेपी से सबसे प्रिय विषय को उनके हाथ से छीन लिया है। पिछले कई वर्षो से बीजेपी वाले अफजल गुरू को फासी दो के नारे लगाते रहे है लेकिन सिंन्दे के विभाग की तत्परता के कारण अफजल गुरू को फांसी दी जा चुकी है। यहां अफजल गुरू को दी गई फांसी के गुणदोष पर विचार करने का इरादा नही है लेकिन यह साफ है कि बीजेपी के लिये अब अफजल गुरू के नाम के मुद्दे की जगह काई और नाम लाना पडेगा। इसके साथ ही सुशील कुमार शिन्दे का बहिष्कार कर पाना बहुत मुश्किल होगा । लेकिन बीजेपी को एक डर और भी है कि अगर 2014 के लोकसभा के चुनाव के पहले समझौता एक्सप्रेस , मक्का मसजिद , अजमेर धमाके आदि के अभियुक्त आर एस एस वालो को सजा हो गयी तो मुसलमानो को आतंकवाद का समानार्थी साबित करने की आर एस एस की कोशिश हमेशा के लिये दफन हो जायेगी।

अफजल गुरू को फांसी देने की बीजेपी की मांग से माहौल को धार्मिक ध्रुवीकरण के रंग मे रगने की आर एस एस की कोशिश बेकार साबित हो चुकी है। जिस तरह से भारत के मुसलमानो ने अफजल गुरू को फांसी के मुद्दे को बीजेपी की मंशा के हिसाब से नही ढलने दिया वह अपनी लोकशाही की परिपक्वता का परिचायक है। अफजल गुरू की फांसी की राजनीति पर सोशल मीडिया और अन्य मंचो पर जो बहसें चल रही है उसम भी भारतीय हिन्दू ही बढचढ कर हिसा ले रहे है। मुसलमानो ने आम तौर पर इस मुद्दे पर बी जे पी की मनपसंद टिप्पणी कहीं नही की। इस सन्दर्भ मे उर्दू अखबारो का रूख भी ऐसा रहा जिसको जिम्मेदार माना जायगा। बीजेपी ने जब 1986 के बाद से सावरकर वादी हिन्दुत्व को चुनावी रणनीति का हिस्सा बनाया उसके बाद से ही उनको उम्मीद रहती थी कि जैसे ही किसी ऐसे मुद्दे पर चर्चा की जायेगी जिसमे इतिहास के किसी मुकाम पर हिन्दू मुस्लिम विवाद रहा हो तो माहौल गरम हो जायगा । अयोध्या की बाबरी मसजिद को राम जन्म भूमि बताना इसी रणनीति का हिस्सा था। बहुत ही भावनात्मक मुद्दे के नाम पर आर एस एस ने काम किया। और जो बीजेपी 1984 के चुनावो मे 2 सीटो वाली पार्टी बन गयी थी उसकी संख्या इतनी बढ गयी कि वह जोड तोड कर सरकार बनाने के मुकाम पर पहुंच गयी। आर एस एस वालों की यही सोच है कि अगर चुनाव धार्मिक और साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण को मुद्दा बनाकर लडा गया तो बहुत फायदा होगा। अफजल गुरू के मामले मे भी बीजेपी को यह उम्मीद थी कि देश के मुसलमान तोड फोड करना शुरू कर देंगे और उसको हाईलाइट किया जायगा लेकिन ऐसा नही हुआ। आज की राजनीतिक सच्चाई यहह कि उत्तर प्रदेश मे तो मुसलमान समाजवादी पार्टी की सरकार को अपना शुभचिंतक मानता है लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर मुसलमानो का भरोसा कांग्रेस मे पूरी तरह से हो गया है । प्रधानमंत्री के पंद्रह सूत्री कार्यक्रम को लागू करने के लिये अल्पसंख्यक मामलो के केन्द्र सरकार के मौज्दा मंत्री के रहमान खान दिन रात एक कर रहे है । सच्चर कमेटी और रंगनाथ मिश्र कमीशन की रिपोर्टो पर केन्द्र सरकार का पूरा ध्यान है। जाहिर है मुसलमानों को केन्द्र सरकार की नीयत पर शक नही है। ऐसी हालत मे अगर केन्द्र सरकार से पहल होती है और देश के धमनिरपेक्ष ताने बाने को सुरक्षित रखने के लिये कोई ऐसा कदम भी उठाया जाता है जिस से वीजेपी की चमक कमजोर हो तो मुस्लिम समाज के जिम्मेदार नेता और उर्दू अखबार सहयोग करते नजर आ रहे है।

साम्प्रदायिक राजनीति के पैरोकारो के लिये परेशानी का एक और कारण है। एक तरफ दिग्विजय सिंह है जो आर एस एस और वीजेपी के साम्प्रदायिक रूप को हमले के निशाने मे लेने के किसी मौके को हाथ से नही जाने देते वही दूसरी तरफ पी चिदम्बरम जयराम रमेश आदि नेता है जो सब्सिडी के कैश ट्रान्सफर जैसी स्कीमो पर काम कर रहे है जो देश के हर गांव और हर कालेज मे रहने वाले लोगो को लाभ पहुचायेगी। वजीफो आदि को सीधे लाभार्थी के खाते मे जमा करने देने वाली जो स्कीमे है वे निश्चित रूप से महात्मा गांधी के भाषणो और लेखो मे बताये गये आखरी आदमी को लाभ पंहुचायेगी। कांगेंस के इस चौतरफा अभियान के बीच बीजेपी वाले भावी प्रधानमंत्री के दावेदार के खेल मे अपने आपको धिरा पाते है। दिल्ली दरबार मे सक्रिय बीजेपी वाले भावी प्रधानमंत्री के दावेदार के खेल मे अपने आपको घिरा पाते है । दिल्ली दरबार मे सक्रिय बीजेपी वाले और उनके समर्थक पत्रकार कुछ इस तरह से बात करते पाये जाते है जैसे बीजेपी को बहुतमत मिल चुका है और अब किसी बीजेपी नेता को प्रधानमंत्री पद की शपथ लेनी बाकी है। इसी सिलसिले मे नेन्द्र मोदी का नाम उछाला जा रहा है। उनका नाम ऐसे लोग उछाल रहे है जिनका आर एस एस और बीजेपी की सियासत मे कोइ मजबूत स्थान नही है। बीजेपी के अध्यक्ष और आर एस एस के बडे नेताओ सहित सावरकरवादी हिन्दुत्व के सभी पैरोकारो मे नरेन्द्र मादी का विरोध है लेकिन मीडिया के बल पर राजनीति करने वाले मोदी के कुछ मित्रो ने माहौल बना रखा है। बीजेपी नेता लालकृष्ण आडवानी को प्रधानमंत्री पद क दावेदार के रूप मे पूरे देश मे घुमते हुए 2009 के चुनावो मे जिन लोगो ने देखा है उनको मालूम है कि बीजेपी नेताओ के प्रधानमंत्री पद के सपनो मे कितना प्रहसन हो सकता है। वैसे भी अटल विहारी वाजपेयी को इस देश के प्रधानमंत्री बनाने मे 20 से ज्यादा पार्टिया शामिल थी। उन पार्टियो मे रामविलास पासवान फारूख अब्दुल्ला ममता

बनर्जी, चन्द्रबाबू नायडू मायावती जैसे लोग भी थे। अब यह सारे लोग किसी ऐसी पार्टी के साथ नही जायेगे जो साम्प्रदायिक हो। 2004 के लोकसभा चुनावो मे यह सभी पार्टिया तबाह हो गयी थो। आज बीजेपी के साथ केवल दो पार्टियो तहे दिल से है । शिवसेना और अकाली दल नीतिश कुमार की पार्टी को अगर धर्मनिरपेक्ष पार्टीयेा मे रहने का मौका मिला तो वह भी सावरकर वादी हिन्दुत्व की पार्टी से नाता तोड मे संकोच नही करेगी।

ऐसी हालत मे देश को साम्प्रदायिकता की आग मे झोक कर सत्ता हासिल करने की कोई कोशिश सफल होती नही दिखती । आर एस एस और बीजेपी की कोशिश है कि जिस तरह से 1996 से लेकर 2002 तक साम्प्रदायिक राजनीति के सहारे देश मे ध्रुवीकरण किया गया था अगर वह एक वार फिर संभव हो गया तो सत्ता फिर हाथ आ सकती है। लेकिन अब देश के लोग खासकर बहुसंख्यक मुसलमान ज्याद मेच्योर हो गये है । अब न तो बहुसंख्यक हिन्दुओ को नकली मुद्दो मे फसाया जा सकता है और न ही बहुसंख्यक मुसलमानो को ऐसी स्थिति मे। अगर बाबरी मस्जिद के मसले का कोई समाधान अगले दो चार महीनो मे हो गया तो सावरकरवादी हिन्दुत्व की समर्थक राजनीतिक ताकतो के सामने अस्तित्व का संकट भी आ सकता है।

उत्तर– आपने ठीक लिखा है । संघ चरित्रवान लोगो का संगठन है। राजनैतिक गुणा भाग के संबंध मे नासमझी उसकी अब तक की सबसे बडी कमजोरी रही है और भविष्य मे भी रहेगी। आज के बौद्धिक वातावरण मे भी संघ सौ वर्ष पुराने डंडे को ही प्रतीक मानकर अपनी जिद पर अडा हुआ है। मै संघ के बहुत निकट हूँ भी और रहा भी हूँ । मेरा पूरा जीवन इनके साथ ही बीता है। मैने अपने संघ के साथियो को बहुत समझाया कि व्यवस्था मे विचार का महत्व भावना से अधिक होता है किन्तु मुझे हमेशा विचारो की अपेक्षा डंडे की ही उपयोगिता समझाते रह गये। हार थक कर मैने हिन्दुत्व की वैचारिक दिशा ली है।

मै अच्छी तरह जानता हूँ कि संघ भाजपा की आवश्यकता भी है और समस्या भी। अटल जी जब प्रधानमंत्री बने तो उनके बनने मे भी संध का महत्वपूर्ण योगदान रहा और गिराने मे भी। अटल जी ने चाहे अन्य मामलीा मे जितने अच्छे कार्य किये हो किन्तु संघ के कार्यकर्ताओ को सिर्फ उनका ब्रम्हचर्य भोजन और वीयर से ज्यादा कुछ सोचना ही नही था। अटल जी भले आदमी थे इसलिये बरदाश्त कर गये। यदि इन्होने मोदी को प्रधानमंत्री बनवाकर वैसा ही व्यवहार किय। तो मोदी जी अन्य सारे तरीके भी जानते है। संघ भावनात्मक मुद्दे से आगे न बढेगा न बढने देगा। संघ की तुलना ऐसे सहायको मे होती है जो मालिक की गर्दन पर बैठे जहरीले सर्प को मारने के लिये मालिक की गर्दन सहित सर्प के टुकडे टुकडे कर देगा। आगामी चुनावो मे भी होना वही है। संध अपने मुद्द थोपेगा।आर्थिक विषयो का संघ को कोई ज्ञान है नही। यदि जीत गये तो वर्ष दो वर्ष से ज्यादा टिकने ही नही देंगे, और वैसे तो संघ भाजपा को जोतने ही नही देगा।

वैसे कुल मिलाकर नरेन्द्र मोदी ने संध की अकड घटाइ है क्या होगा यह अभी साफ नही हैं। आगे और स्पष्ट होगा।